जलवायु परिवर्तन और कृशि पर इस प्रभाव

प्रस्तावनाः जलवायु परिवर्तन तथा उसकी अस्थिरता मानव की चिंता के विशय हैं। बार–बार पड़ने वाले सूखे तथा तथा आने वाली बाढ़ें उन लाखों लोगों की आजीविकाओं पर अत्यधिक गंभीर प्रभाव डालती हैं, जो अपनी अधिकांष आवष्यकताओं के लिए भूमि पर निर्भर रहते हैं। वैष्विक अर्थव्यवस्था सूखे और बाढ़, षीत और उश्ण लहरों, जंगल में लगने वाली आ ग, भूस्खलन आदि जैसी भयावह घटनाओं के परिणामस्वरूप बार–बार प्रतिकूल रूप से प्रभावित होती है। भूकंप, सुनामी और ज्वालामुखी विस्फोट जैसी प्राकृतिक आपदाएं हालांकि मौसम–संबंधी आपदाओं से जुड़ी हुई नहीं हैं, फिर भी ये पर्यावरण की रासायनिक संरचना को परिवर्तित कर देती हैं। इसके परिणामस्वरूप, मौसम–संबंधी आपदाएं उत्पन्न होती हैं। जीवाष्म ईंधनों, के जलने से उत्पन्न होने वाली कार्बन डाइआक्सइड क्लोरो–फ्लूरोकार्बन्स सीएफएस, हाइड्रो क्लोरोफ्लूरो कार्बन्स (एचसीएफसी), हाइड्रोफ्लूरोकार्बन्स (एचएफसी), परफ्लूरोकार्बन्स (पीएफसी), आदि जैसी ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन के कारण वायुमण्डल में एरोसोल्स (वायुमण्डलीय प्रदूशक) में वृद्धि, ओजोन क्षरण और यूवी–बी निस्यंदक विकिरण, ज्वालामुखियों का फटना, जंगल की आग के रूप में गैर–वनीकरण में ष्मानव का हाथष् तथा आर्द्रभूमियों की हानि, जलवायु में भारी परिवर्तन होने के आम कारक हैं। वन–क्षेत्रों की हानि, जो प्रायः वर्शा जल को रोकते हैं और इसे मृदा द्वारा अवषोशित किए जाने की प्रक्रिया को सुगम बनाते हैं, ऐसा अवक्षेपण उत्पन्न करती है जो समस्त भूमि पर व्याप्त हो जाता है तथा ऊपरी मृदा को नश्ट कर देता है, जिसके परिणामस्वरूप बाढ़ और सूखा पड़ता है। विरोधाभासस्वरूप, वृक्षों का अभाव मृदा को अतिषीघ्र षुश्क बनाकर षुश्क वर्शों में सूखे की स्थिति उत्पन्न करते हैं। ग्रीनहाउस गैसों में से, बव$_2$ एक प्रधान गैस है जिसके परिणामस्वरूप वैष्विक तापन उत्पन्न होता है क्योंकि यह दीर्घ तरंग वाले विकिरण को रोकती है और उसे वापस पृथ्वी की सतह को उत्सर्जित कर देती है। वैष्विक तापनग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन के कारण सतही वायुमण्डल का उश्मण है, जिसके कारण एक दीर्घकालिक अवधि में वायुमण्डलीय तापमान में वृद्धि होती है। सतही वायु के तापमान में ऐसे परिवर्ततन तथा उसके फलस्वरूप एक दीर्घ समयावधि में

वर्शा पर उसके प्रतिकूल प्रभाव को जलवायु परिवर्तन कहा जाता है। यदि ये मापदण्ड वर्श–दर–वर्श परिवर्तन अथवा चक्रीय रूझान दर्षाते हैं, तो इन्हें जलवायु अस्थिरता कहा जाता है।

तथापि, संयुक्त राश्ट्र जलवायु परिवर्तन फ्रेमवर्क कंवेन्षन (यूएनएफसीसीसी) द्वारा दी गई अधिकारिक परिभाशा यह है कि जलवायु परिवर्तन ऐसा परिवर्तन है जो मानव के उस क्रियाकलाप द्वारा प्रत्यक्षतः अथवा अप्रत्यक्षतः उत्पन्न होता है जो वैष्विक वायुमंडल की संरचना को परिवर्तित करता है तथा जो किसी तुलनात्मक समयावधि में देखी गई स्वाभाविक जलवायु अस्थिरता के अतिरिक्त है। तथापि, वैज्ञानिक जलवायु में किसी भी परिवर्तन के लिए इस षब्द का प्रायः उपयोग करते हैं, चाहे वह प्राकृतिक रूप से उत्पन्न होता हो अथवा मानव द्वारा कारित हो। विषेश रूप से, जलवायु परिवर्तन संबंधी अंतर्सरकारी पैनल (आईपीसीसी) ने जलवायु परिवर्तन को जलवायु की अवस्था में एक ऐसे परिवर्तन के रूप में परिभाशित किया है जिसे इसकी विषेशताओं के माध्य और/अथवा अस्थिरता में परिवर्तनों द्वारा पहचाना जा सकता है तथा जो एक विस्तारित अवधि, विषिश्टतः एक दषक अथवा उससे अधिक, के लिए बना रहता है।

मौसम और जलवायुः मौसम किसी विषेश समय और स्थान पर मौसमविज्ञान–संबंधी परिस्थितियों जैसे हवा, वर्शा, हिम, सूर्य की रोषनी, तापमान आदि का एक सेट है। तुलनात्मक रूप से, मौसम षब्द किसी एक स्थान पर अनुभव की गई मौसम की समग्र दीर्घकालिक विषेशताओं का वर्णन करता है। किसी क्षेत्र की पारिस्थिकियां, कृशि, आजीविकाएं और बस्तियां इसकी जलवायु पर अत्यधिक निर्भर होती हैं। अतः जलवायु को औसत परिस्थितियों तथा साथ ही इन परिस्थितियों की अस्थिरता को ध्यान में रखते हुए मौसम की स्थितियों का दीर्घकालिक सार माना जा सकता है। वर्श–दर–वर्श उत्पन्न होने वाले उतार–चढ़ाव तथा उग्र परिस्थितियों जैसे प्रचण्ड तूफान अथवा असामान्य गर्म मौसम के आंकड़े जलवायु की अस्थिरता के भाग हैं।

पृथ्वी की जलवायु में पिछले काफी समय से पर्याप्त बदलाव आया है जैसाकि हिम युग के भूवैज्ञानिक साक्ष्यों द्वारा तथा सैकड़ों वर्शों के मानव इतिहास के अभिलेखों द्वारा दर्षाया गया है। पूर्व के परिवर्तनों के कारण सदैव स्पश्ट नहीं हैं परंतु वे सामान्यतः समुद्र की लहरों, सौर क्रियाकलाप, ज्वालामुखी विस्फोट और अन्य प्राकृतिक कारकों से जुड़े हुए माने जाते हैं। अब इसमें अंतर यह है कि वैष्विक तापमान पिछले कुछ दषकों में असामान्य रूप से तेजी से बढ़ा है। औसत वैष्विक वायु और समुद्र के तापमानों वृद्धि के, हिम और बर्फ के व्यापक रूप से पिघलने के तथा औसत वैष्विक समुद्र स्तरों में वृद्धि होने के ठोस साक्ष्य विद्यमान हैं। आईपीसीसी की चौथी मूल्यांकन रिपोर्ट यह निश्कर्श निकालती है कि वैष्विक तापन असंदिग्ध है। वायुमण्डल और समुद्रों का तापमान उस स्थिति की तुलना में अधिक है जो पिछली पांच षताब्दियों में, और संभवतः एक सहस्राब्दि से भी अधिक समय के दौरान किसी भी समय हुआ करता था। वैज्ञानिकों ने बहुत पहले यह जान लिया था कि वायुमण्डल की ग्रीनहाउस गैसें एक आवरण के रूप में कार्य करती हैं जो आने वाली सौर ऊर्जा को रोक लेती हैं और पृथ्वी की सतह को उस मात्रा तक गर्म करती है, जो अन्यथा उतना गर्म नहीं होता, तथा वायुमण्डल की ग्रीनहाउस गैसों में वृद्धि का अर्थ है अतिरिक्त उश्मण।

महत्वपूर्ण मौसमीय उग्र–परिस्थितियां तथा वैष्विक स्तर पर उनके प्रभाव

1998 का वर्श उश्णतम वर्श था तथा इसे मौसम संबंधी आपदा वर्श के रूप में घोशित किया गया था। इसने मध्य अमरीका में भंयकर तूफान से बर्बादी पैदा की तथा चीन, भारत और बंगलादेष में भयंकर बाढ़ें आई। कनाड़ा और न्यू इंग्लैंड ने जनवरी 1998 में हिम तूफान के कारण भारी नुकसान उठाया तथा जून 1998 में तुर्की, आर्जेंटीना और परागुए में बाढ़ के कारण भारी तबाही हुई। इसकी तुलना में, वर्श 1997–98 में बेमौसम बारिष तथा वर्शा के निश्कृश्ट वितरण के कारण महाराश्ट्र (भारत) में फसलों का भारी नुकसान देखा गया। 1997/1998 की अल नीनो घटना (अल नीनो प्रषांत महासागार का उश्मण है), जो पिछले षताब्दी में सबसे वीभत्स थी, ने 110 मिलियन लोगों को प्रभावित किया तथा इससे वैष्विक अर्थव्यवस्था को लगभग 100 बिलियन अमरीकी डॉलर का नुकसान हुआ।

2003 का वर्श समूचे विष्व में गर्मी और सर्दी का वर्श था। 2003 के ग्रीश्म में चलने वाली गर्म हवाओं के कारण यूरोपीय संघ (ईयू) बहुत अधिक प्रभावित हुआ। भारत में, उत्तर प्रदेष, बिहार पष्चिम बंगाल, उड़ीसा और आंध्र प्रदेष वे राज्य हैं जिन्होंने ग्रीश्मकालीन गर्म हवाओं का अनुभव किया। जब वर्श 2003 के ग्रीश्म में यूरोपीय संघ गर्म हवाओं से प्रभावित हुआ, भारत ने दिसम्बर 2003 से जनवरी 2003 तक अत्यंत ठंडी हवाओं का अनुभव किया। जम्मू, पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेष, बिहार, उत्तर प्रदेष और पूर्वोत्तर राज्यों ने अभूतपूर्व षीत लहर का अनुभव किया। बागवानी फसलों तथा मौसमीय फसलों के मामले में फसल पैदावार का नुकसान 10 से 100 प्रतिषत के बीच में था। बागवानी फसलों में फल का आकार तथा उसकी गुणवत्ता भी प्रतिकूल रूप से प्रभावित हुई। तथापि, अत्यधिक सर्दी के कारण षीतोश्ण फलों जैसे सेब, आड़ू, आलूबुखारा तथा चेरी की उच्च पैदावार हुई। यह क्षति निम्न क्षेत्रों में अधिक थी जहां ठंडी हवा नीचे बैठ गई तथा घरती पर एक लंबे समय तक बनी रही (समरा एट.एल.,2001)।

मार्च 2004 में उच्च तापमान ने भारत में हिमाचल प्रदेष राज्य में गेहूं, सेब, सरसों, रेपसीड, अलसी, आलू, सब्जियों, मटर और चाय को प्रतिकूल रूप से प्रभावित किया। फसल पर निर्भर करते हुए पैदावार नुकसान का आकलन 20 प्रतिषत और 60 प्रतिषत के बीच किया गया है। गेहूं और आलू की पैदावार 15–20 दिन आगे चल रही थी तथा सेब में फूल 15 दिन पहले आ गए थे। सेब के मामले में फल के खिलने तथा फल के बनने के लिए उपयुक्त तापमान 24° से. होता है, परंतु इसने 17 दिनों के लिए 26° से. से अधिक तापमान का अनुभव किया। मार्च 2004 में हिमाचल प्रदेष राज्य में सामान्य तापमान की तुलना में समूचे क्षेत्र ने 2.1 और 7.9° से. ज्यादा अधिकतम तापमान दर्ज किया (प्रसाद और राणा, 2006)। केरल, भारत के मध्य भाग में 14 जनवरी से 16 मार्च के बीच अधिकतम तापमान में 1 से 3° से. तक हुई वृद्धि के कारण वर्श 2003 की तुलना में वर्श 2004 में कोको की वार्शिक पैदावार में 39 प्रतिषत की गिरावट देखी गई। ऐसी ही प्रवृत्ति उस समय सदैव देखी गई जब कभी 33 से 36.5° से. के सामान्य अधिकतम तापमान की तुलना में ग्रीश्मकाल में तापमान 2 से 3° से. तक बढ़ गया।

असमय हुई वर्शा और ओला–वृश्टि ने भारत में वर्श 2007 के रबी मौसम में उत्तर प्रदेष, हरियाणा और पंजाब के 15,000 हैक्टेयर (है.) क्षेत्र की गेहूं की फसल को नश्ट कर दिया। इसकी तुलना में, पष्चिमी ओर से होने वाली मौसम की खराबी कारण वर्श 2007 में कष्मीर घाटी में अत्यधिक हिमपात हुआ। ऐसी ही स्थिति वर्श 2007 के मानसून में उत्पन्न हुई, जिसमें भारत और बंगला देष के साथ–साथ अनेक महाद्वीपों में (मेक्सिको में अगस्त में प्रचण्ड तूफान) बाढ़ की स्थिति उत्पन्न हुई। आंध्र प्रदेष, कर्नाटक और केरल में सितम्बर में आई भारी वर्शा के कारण बाढ़ आई और इस प्रकार वर्श 2007 को भारत में ष्बाढ़ वर्शष् के रूप में घोशित कर दिया गया। वर्श 2007 में खरीफ के मौसम में आई बाढ़ के कारण देष के अनेक राज्यों में फसल का भारी नुकसान हुआ। यही स्थिति अलजीरिया, यूगांडा, सूडान, इथियोपिया और कीनिया में भी थी। नवम्बर 2007 में आए महाचक्रवात ष्सिड्रष् के कारण बंगलादेष में भारी नुकसान हुआ।

फरवरी 2007 में चीन में बीजिंग का तापमान 16° से. था, जो कि 1840 में आरंभ किए गए मौसम–विज्ञान रिकार्ड के पष्चात से सर्वाधिक तापमान था। इसके पष्चात, जनवरी 2008 में इसकी सर्वाधिक ठंडी और बर्फीली षीत ऋतु आई। 10 जनवरी 2008 के बाद से लगातार तीन सप्ताह की अवधि तक हुई भारी बर्फबारी के परिणामस्वरूप 22,000 घरों की तबाही के अलावा 104 मिलियन है. कृशि भूमि नश्ट हो गई तथा इसके परिणामस्वरूप आर्थिक नुकसान का अनुमान 7.5 बिलियन डॉलर लगाया गया था। ला नीना पद्धति को भी भारी हित तूफानों का एक अन्य कारण माना जाता है। ला नीना भूमध्यवर्ती प्रषांत महासागर में अत्यंत असामान्य षीत जल का एक विषाल भण्डार है जो पिछले कुछ वर्शों में ही विकसित हुआ है, और वैष्विक मौसम को प्रभावित करता है तथा यह अल नीनो के विपरीत है। अल नीनो प्रषांत महासागर का तापन है। 6.2.2008 को मुंबई में पारा 9.4° से. तक गिर गया, जोकि एक नया निम्नतम तापमान है। ऐसी आसामान्य मौसम पद्धतियों की विष्व में बार–बार घटित होने की संभावनाएं हैं तथा इनसे भारी आर्थिक नुकसान होने का अनुमान लगाया गया है।

माध्य समुद्र तल (एमएसएल) के भारतीय तट क्षेत्र में एक मि.मी./वर्श से कुछ कम होने की संभावना है। समुद्र तल में वृद्धि होने के फलस्वरूप सामुद्रिक जैव–विविधता में परिवर्तन होने के साथ–साथ

तटीय–पट्टी के निचले क्षेत्रों के अदृष्य होने की संभावनाएं बढ़ जाती हैं। इससे सीपों तथा ध्रुवीय भालुओं की जनसंख्या के लिए खतरा उत्पन्न होता है। मानसूनोत्तर अवधि के दौरान हवा की गति में अधिकतम वृद्धि होने के अलावा उच्च लहरों की बड़ी संख्या तथा चक्रवातों के बार–बार आने की संभावनाएं भी हो जाती हैं। समुद्र के स्तर में वृद्धि की यह प्रक्रिया कृशि के लिए उपलब्ध क्षेत्र को भी संकट में डालती है।

एफएओ की संयुक्त राश्ट्र रिपोर्ट के अनुसार भारत के वर्श 2015 तक जलवायु में परिवर्तन होने के कारण इसके वर्शासिंचित अनाज के उत्पादन में 125 मिलियन टन, जोकि 18 प्रतिषत के समकक्ष है, का नुकसान होने की संभावना है। इसी अवधि के दौरान चीन के 360 मिलियन टन के वर्शासिंचित अनाज उत्पादन में 15 प्रतिषत की वृद्धि होने की आषा है। यह अनाज की फसल में समूचे विष्व में भी गिरावट पैदा करेगा जिसके परिणामस्वरूप 400 मिलियन लोग भुखमरी के जोखिम में आ जाएंगे तथा 3 मिलियन लोग बाढ़ के संकट में होंगे और उन्हें स्वच्छ जल की आपूर्ति की पहुंच प्राप्त नहीं होगी। जलवायु परिवर्तन के कारण हुआ उत्पादन का नुकसान भी अल्पपोशित लोगों की संख्या में भारी वृद्धि कर देगा जिससे गरीबी और खाद्य सुरक्षा के लिए किए जा रहे प्रयास प्रतिकूल रूप से प्रभावित होंगे। इसका सबसे गंभीर प्रभाव उप–सहाराई अफ्रीकी देषों में पड़ेगा जो जलवायु परिवर्तन के प्रति स्वयं को अनुकूल बनाने अथवा खाद्य आयातों के माध्यम से इसकी प्रतिपूर्ति करने में अत्यंत कम समर्थ हैं। वर्श 2004 असौ 2005 में, चौबीस (24) उप–सहाराई अफ्रीकी देषों ने टिड्डियों और सूखे के भयावह संयोजन के कारण खाद्य संबंधी आपात–स्थितियों का सामना किया। इसके अलावा, संयुक्त राज्य अमरीका में प्रतिकूल गर्म और षुश्क मौसम तथा यूरोपीय संघ के भागों में व्याप्त सूखे की परिस्थितियों ने 2004 की तुलना में 2005 के खाद्यान्न उत्पादन में कमी ला दी। अनुकरण मॉडल यह दर्षाता है कि वैष्विक तापन के परिणामस्वरूप उत्तरी भारत में चावल और गेहूं के उत्पादन में कमी आई है।

भारतीय अर्थव्यवस्था अधिकांषतः कृशि पर आधारित है तथा यह मानसून के आगमन और इसके आगे की प्रवृत्तियों पर निर्भर है। वर्श 2007 इस बात का एक ज्वलंत उदाहरण है कि कैसे भारतीय खाद्यान्न उत्पादन जुलाई की वर्शा पर निर्भर करता है तथा इस वर्श देष में ष्अखिल भारतीय सूखाष् घोशित

किया गया था क्योंकि देष के दीर्घावधिक वर्शा औसत की तुलना में वर्शा में 19 प्रतिषत की कमी आई थी और सूखे के कारण 29 प्रतिषत कृशि–क्षेत्र प्रभावित हुआ था। श्अखिल भारतीय सूखाश तभी घोशित किया जाता है जब देष की वर्शा में समग्र कमी सामान्य स्तर की तुलना में 10 प्रतिषत से अधिक होती है, और जब सूखे की स्थिति के कारण देष का 20 प्रतिषत से अधिक क्षेत्र प्रतिकूल रूप से प्रभावित होता है। वर्श 2002 के मानसून के दौरान श्अखिल भारतीय सूखेश के कारण खरीफ मौसम के खाद्यान्न उत्पादन में 19.1 प्रतिषत की भारी कमी हुई।

जलवायु परिवर्तन और कृशि

ऊपर दर्षाए गए कतिपय पूर्व अनुभवों के आधार पर कृशि पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव पृथ्वी पर मानवजाति की भावी खाद्य सुरक्षा पर प्रभाव डालने वाला एक प्रमुख निर्णायक कारक हो सकता है। कृशि न केवल जलवायु परिवर्तन के प्रति संवेदनषील है, बल्कि यह जलवायु परिवर्तन का एक प्रमुख कारक भी है। किसी निष्चित अवधि के दौरान जलवायु परिवर्तनों को समझना तथा बेहतर पैदावार हासिल करने के लिए प्रबंधन प्रक्रियाओं को समायोजित करना समग्र रूप से कृशीय क्षेत्र के विकास के लिए चुनौतियां बने हुए हैं। कृशि की जलवायु संवेदनषीलता अनिष्चित है, क्योंकि वर्शा, तापमान, फसल और पैदावार प्रणालियों, मृदा और प्रबंध प्रक्रियाओं में क्षेत्र के आधार अंतर होता है। तापमान और वृश्टिपात में अंतर्वार्शिक परिवर्तन तापमान और वृश्टिपात में अनुमानित परिवर्तनों की तुलना में काफी अधिक थे। यदि अनुमानित जलवायु परिवर्तन जलवायु की अस्थिरता में वृद्धि कर देते हैं, तो फसलों का नुकसान बढ़ जाता है। चूंकि वैष्विक तापन के संष्लिश्ट प्रभाव होते हैं, अतः विभिन्न फसलें भिन्न प्रकार से प्रतिक्रिया दर्षाती हैं। उश्णकटिबंधीय क्षेत्र कृशि पर अधिक निर्भर होते हैं क्योंकि विष्व की 75 प्रतिषत जनसंख्या उश्णकटिबंधीय क्षेत्रों में रहती है तथा इनमें से दो–तिहाई लोगों का मुख्य व्यवसाय कृशि है। प्रौद्योगिकी के निम्न स्तरों, कीटों रोगों और खरपतवारों की विषाल परिधि, भूमि क्षरण, असमान भूमि वितरण तथा जनसंख्या में हो रही तेज वृद्धि के साथ उश्णकटिबंधीय कृशि पर किसी भी प्रकार का प्रभाव उन लोगों की आजीविका को प्रभावित करेगा। चावल, गेहूं, सोरघम, सोयाबीन तथा जौ विष्व की छह प्रमुख फसलें हैं जो 40 प्रतिषत पैदावार–क्षेत्र में

उगाई जाती हैं तथा गैर–मांस कैलोरी के 55 प्रतिषत भाग का योगदान करती हैं और पषुचारे में 70 प्रतिषत से अधिक का सहयोग करती हैं (एफएओ, 2006)। अतः इन फसलों पर पड़ने वाला कोई भी प्रभाव खाद्य सुरक्षा को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करेगा।

वैष्विक स्तर पर जलवायु परिवर्तन के लिए प्रमुख अनुमानः भावी जलवायु पैटर्नों के अनुमान व्यापक रूप से जलवायु प्रणाली के कम्प्यूटर आधारित मॉडलों पर आधारित हैं जिनमें आने वाले दषकों के लिए सामाजिक–आर्थिक परिदृष्य से ग्रीनहाउस गैसों में आषयित वृद्धि के साथ–साथ वायुमण्डल और समुद्रों के महत्वपूर्ण कारक और प्रक्रियाएं अंतर्विश्ट हैं। आईपीसीसी ने अनेक विभिन्न मॉडलों से प्रकाषित परिणामों की जांच की है तथा साक्ष्यों के आधार पर यह अनुमान लगाया है कि वर्श 2010 तक–

- वैष्विक औसत सतही तापन (सतही वायु तापमान परिवर्तन) में 1.1 से 6.4° से. तक वृद्धि हो जाएगी।
- समुद्र का स्तर 18 और 59 सें.मी. के बीच बढ़ जाएगा।
- महासागर और अधिक अम्लीय हो जाएंगे।
- इस बात की बहुत संभावना है कि अत्यधिक गर्म स्थितियां, गर्म लहरें और अत्यधिक वर्शा की घटनाएं अधिक संख्या में हो जाएंगी।
- इस बात की संभावना है कि उच्च अक्षांषों पर अत्यधिक वर्शा होगी तथा यह भी संभावित है कि अधिकांष उप–कटिबंधीय भूमि–क्षेत्रों में कम वर्शा होगी।
- इस बात की बहुत संभावना है कि उश्णकटिबंधीय चक्रवात (टाइफून और हरीकेन्स) और अधिक प्रचण्ड हो जाएंगे जिनमें वायु की गति अत्यधिक तेज होगी और तेज वर्शा भी होगी तथा इसके साथ उश्णकटिबंधीय समुद्र के सतह के तापमानों में निरंतर वृद्धि भी होगी।

वैष्विक स्तर के मुख्य क्षेत्रों पर जलवायु परिवर्तन के संभावित प्रभावः कार्यकारी समूह प्प् की आईपीपीसी चौथी मूल्यांकन रिपोर्टः प्रभाव, अनुकूलनता और सुभेद्यता जलवायु परिवर्तन के संभावित प्रभावों का वर्णन

करती है, जिनमें अत्यधिक उग्र घटनाओं में वृद्धि होना भी षामिल है। सुधारात्मक उपायों के अभाव में प्रमुख क्षेत्रों के प्रभावों को नीचे संक्षेप में दिया गया हैः

जलः सूखा प्रभावित क्षेत्रों के और अधिक व्यापक रूप से वितरित होने की आषा है। भारी वर्शा की घटनाओं में भी अत्यधिक वृद्धि होने की संभावना है जिसके परिणामस्वरूप खाद्य जोखिमों में वृद्धि होती है। षताब्दी के मध्य तक, षुश्क उश्णकटिबंधों तथा अन्य क्षेत्रों में और मध्य अक्षांषों में जल की उपलब्धता में कमी होने की संभावना है जिनमें पर्वतीय श्रृंखलाओं से पिघलने वाले जल की आपूर्ति होती है। विष्व की कुल जनसंख्या का लगभग 16 प्रतिषत भाग वर्तमान में पर्वतीय श्रृंखलाओं से पिघलकर निकलने वाले जल पर निर्भर है।

खाद्यः जबकि कुछ मध्य अक्षांष और उच्च अक्षांष वाले क्षेत्र प्रारंभ में उच्च कृशीय उत्पादन से लाभान्वित होंगे, अन्य अनेक निम्न अंक्षांष वाले क्षेत्रों, विषेश रूप से मौसमीय षुश्क और उश्णकटिबंधी क्षेत्रों में स्थित इलाकों के लिए तापमान में वृद्धि तथा सूखे और बाढ़ के बार–बार आने से फसल उत्पादन नकारात्मक रूप से प्रभावित होने की संभावना है जो भूख का जोखिम झेलने वाले लोगों की संख्या बढ़ाएगा तथा विस्थापन और पलायन के स्तरों में वृद्धि करेगा।

उद्योग, बस्तियां और समाजः सबसे संवेदनषील उद्योग, बस्तियां और समाज सामान्यतः वे हैं, जो तटीय क्षेत्रों और नदी के बाढ–संभावित क्षेत्रों में स्थित हैं तथा जिनकी अर्थव्यवस्था जलवायु संवेदनषील संसाधनों के साथ निकटता से संबद्ध है। यह बात विषेश रूप से उन स्थानों पर लागू होती है जो पहले से अत्यंत प्रचण्ड मौसम–संबधी घटनाओं के प्रति संवेदनषील हैं तथा इनमें विषेशतः वे स्थान भी षामिल हैं जहां तेजी से षहरीकरण किया जा रहा है। जिन स्थानों पर प्रचण्ड मौसम संबंधी क्रियाकलाप अधिक गहन हो गए हैं अथवा बार–बार घटित होते हैं, उन क्रियाकलापों की आर्थिक और सामाजिक लागत में भी वृद्धि हो जाती है।

स्वास्थ्यः जलवायु में होने वाले संभावित परिवर्तन लाखों लोगों के स्वास्थ्य की स्थिति को बदल सकते हैं, जिसमें गर्म हवाओं, बाढ़, तूफानों, आग तथा सूखे के कारण मौतों, बीमारियों ओर चोट लगने की घटनाओं में वृद्धि होना भी षामिल है। कुछ क्षेत्रों में अतिसार रोग तथा मलेरिया का प्रकोप संपूर्ण मानव स्वास्थ के लिए सुभेद्यता में वृद्धि करता है तथा आपदाओं के कारण स्वास्थ्य प्रणालियों को होने वाली दीर्घकालिक क्षति से विकास संबंधी लक्ष्य प्रभावित होते हैं।

एषिया पर संभावित प्रभाव

- एषिया–प्रषांत क्षेत्र चावल और गेहूं की विष्वव्यापी पैदावार के मामले में सर्वाधिक प्रभावित होगा तथा पैदावार में कमी दक्षिण एषिया के 1.6 बिलियन लोगों की खाद्य सुरक्षा के लिए चुनौती प्रस्तुत करेगी।
- फसल मॉडल यह दर्षाता है कि दक्षिण एषिया में, 20 फसलों की औसत पैदावार 2000 की तुलना में, 2050 में जलवायु परिवर्तन के कारण गेहूं में लगभग 50 प्रतिषत , चावल में 17 प्रतिषत तथा मक्का में 17 प्रतिषत तक गिर जाएगी।
- पूर्व एषिया और प्रषांत में, जलवायु परिवर्तन के कारण फसलों की पैदावार 2000 के स्तरों की तुलना में, 2015 में चावल में लगभग 20 प्रतिषत, सोयाबीन में 13 प्रतिषत, गेहूं में 16 प्रतिषत तथा मक्का में 4 प्रतिषत तक गिर जाएगी।
- जलवायु परिवर्तन के साथ, 2050 में एषिया में औसत कैलोरी की उपलब्धता लगभग 15 प्रतिषत तक निम्न होने की संभावना है तथा किसी गैर–जलवायु परिवर्तन परिदृष्य की तुलना में अनाज का उपयोग 24 प्रतिषत तक नीचे गिरने का अनुमान लगाया गया है।

- गैर–जलवायु परिवर्तन परिदृष्य में, दक्षिण एषिया में कुपोशण का षिकार बालकों की संख्या 2000 से 2015 के बीच के 76 से 52 मिलियन तक गिर जाएगी तथा पूर्व एषिया और प्रषांत क्षेत्र में यह 24 ये 10 मिलियन तक गिर जाएगी।
- जलवायु परिवर्तन इस कतिपय प्रगति को समाप्त कर देगा; जिससे दक्षिण एषिया में कुपोशण का षिकार बच्चों की संख्या 2050 में बढ़कर 59 मिलियन हो जाएगी तथा पूर्व एषिया और प्रषांत क्षेत्र में यह 14 मिलियन हो जाएगी जिससे कुपोशण का षिकार बच्चों की कुल संख्या बढ़कर लगभग 11 मिलियन हो जाएगी।
- पोशण पर जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने के लिए दक्षिण एषिया को ग्रामीण विकास के क्षेत्र में 1.5 बिलियन अमरीकी डॉलर के अतिरिक्त वार्शिक निवेष की आवष्यकता होगी जबकि प्रषांत क्षेत्र में लगभग 1 मिलियन अमरीकी डॉलर अतिरिक्त आवष्यक होगा। दोनों ही क्षेत्रों में, इन निवेषों का लगभग आधा भाग सिंचाई के विस्तार के लिए होना चाहिए।
- जलवायु परिवर्तन के प्रति सर्वाधिक सुभेद्य एषियाई देष हैं–अफगानिस्तान, बंगलादेष, कम्बोडिया, भारत, लाओ पीडीआर, म्यांमार और नेपाल।
- अन्य कारकों के साथ–साथ ग्लेषियरों के पिघलने, बाढ़, सूखा आने, दोशपूर्ण वर्शा, आदि के कारण अफगानिस्तान, बंगलादेष भारत और नेपाल, फसल पैदावार में कमी के प्रति अधिक सुभेद्य हैं।
- एषिया समूचे विष्व में सर्वाधिक आपदा–प्रभावित क्षेत्र है तथा इसके लगभग 89 प्रतिषत लोग विष्वव्यापी आपदओं द्वारा प्रभावित होते हैं।

भारत में जलवायु में देखे गए परिवर्तन और मौसम घटनाएं

सतह का तापमान

राश्ट्रीय स्तर पर, पिछली एक षताब्दी में सतह की वायु के तापमान में 0.4° से. की वृद्धि देखी गई है। मध्य भारत के पष्चिमी तट, आंतरिक प्रायद्वीप और उत्तर–पूर्वी भारत में तापन प्रवृत्ति देखी गई है। तथापि, उत्तर–पष्चिमी भारत तथा दक्षिण भारत के भागों में षीत प्रवृत्तियां देखी गई हैं।

वर्शा

जबकि अखिल भारतीय स्तर पर देखी गई मानसूनी वर्शा कोई उल्लेखनीय प्रवृत्ति नहीं दर्षाती है, क्षेत्रीय मानसून में अंतर दर्ज किए गए हैं। पष्चिमी तट, उत्तरी आंध्र प्रदेष तथा उत्तर–पष्चिमी भारत में मानसून की मौसमीय वर्शा में वृद्धि का रूझान पाया गया है (पिछले 100 वर्शों में सामान्य को + 10 प्रतिषत से + 12 प्रतिषत तक), जबकि पूर्वी मध्य प्रदेष, पूर्वोत्तर भारत तथा गुजरात और केरल के कुछ भागों में मानूसन की मौसमीय वर्शा में कमी का रूझान देखा गया है (पिछले 100 वर्शों में सामान्य के –6 प्रतिषत से –8 प्रतिषत तक)।

प्रचण्ड मौसमीय घटनाएं

बहु–दषकीय अवधियों में अधिक गंभीर सूखे के बाद कम गंभीर सूखे की प्रचण्ड मौसमीय घटनाएं देखी गई हैं। तटों के किनारें 0.011 घटना प्रतिवर्श की दर से प्रचण्ड तूफान की घटनाओं के रूझान में समग्र वृद्धि हुई है। जबकि पष्चिम बंगाल और गुजरात ने वृद्धि के रूझानों की सूचना दी है, उड़ीसा में गिरावट देखी गई है। एक दैनिक वर्शा डाटा सेट का विष्लेशण करते समय वेज्ञानिकों ने (प) उच्च वर्शा की घटनाओं की बारंबारता में वृद्धि का रूझान तथा (पप) 1951 से 2000 तक मध्य भारत में सौम्य घटनाओं की बारंबारता में उल्लेखनीय कमी दर्षाई है।

समुद्र के स्तर में वृद्धि

40 वर्शों से अधिक समय से उत्तरी भारत समुद्र में तटीय लहरों के मापन के रिकार्डों का प्रयोग करते हुए वैज्ञानिकों ने यह अनुमान लगाया है कि समुद्र के स्तर में वृद्धि प्रतिवर्श 1.06–1.75 मिमी. के बीच थी। ये दरें वैष्विक समुद्रों के स्तर में आईपीसीसी के 1–2 मि.मी. प्रति वर्श के अनुमानों के अनुरूप हैं।

भारतीय ग्रीश्म मानसून (आईएसएम) प्रचण्डता में 2040 के आरंभ में वृद्धि होने तथा 2100 तक इसके 10 प्रतिषत तक बढ़ जाने का अनुमान लगाया गया है।

हिमालय ग्लेषियरों पर प्रभाव

हिमालय हिम और बर्फ का एक विषाल स्रोत धारित करता है तथा इसके ग्लेषियर बारह मासी नदियों जैसे सिंधु, गंगा और ब्रहमपुत्र के लिए जल का स्रोत बनते हैं। ग्लेष्यिरों के गलने से उनके दीर्घकालिक सूक्ष्म–मौसमीय प्रवाह प्रभावित होते है तथा जल की उपलब्धता तथा जलविद्युत उत्पादन के संदर्भ में अर्थव्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

हिमालयी ग्लेषियरों पर उपलब्ध मॉनीटरिंग डाटा यह दर्षाता है कि जबकि कुछ हिमालय क्षेत्रों में कतिपय ग्लेषियरों का हाल के वर्शों में अपसर्पण हो गया है, परंतु रूझान समस्त पर्वतीय श्रृंखला में एकरूप नहीं हैं।

21वीं षताब्दी के लिए भारत में जलवायु परिवर्तन के कुछ रूझान

कुछ मॉडलिंग तथा अन्य अध्ययनों ने वैष्विक मानवीय उत्सर्जनों से पर्यावरण में उत्पन्न होने वाले जीएचजी संकेद्रणों में वृद्धि के कारण निम्नलिखित परिवर्तनों का अनुमान लगाया हैः–

वार्शिक माध्य सतहीय तापमान

भारतीय उश्टकटिबंधी मौसम–विज्ञान संस्थान (आईआईटीएम), पुणे द्वारा किए गए अनुरूपण अध्ययनों ने अनुमान लगाया है कि वार्शिक माध्य सतहीय तापमान में षताब्दी के अंत तक 3 से 5° से. तक की वृद्धि होने का अनुमान है जिसमें सर्वाधिक उश्मण भारत के उत्तरी भागों में अधिक सुस्पश्ट होगा।

जल संसाधनों पर प्रभाव

मुख्य जलावायु अस्थिरताओं अर्थात् तापमान, वर्शा और आर्द्रता में परिवर्तनों के जल की गुणवत्ता और मात्रा के संदर्भ में उल्लेखनीय दीर्घकालिक विविक्षाएं हो सकती हैं। ब्रहमपुत्र, गंगा और सिंधु नदियों की प्रणालियां, जो षुश्क मौसम में हिम के गलने से लाभान्वित होती हैं, हिम के आवरण में कमी होने के कारण प्रतिकूल रूप से प्रभावित हो सकती हैं। नर्मदा और ताप्ती को छोड़कर सभी नदियों की द्रोणियों में बहने वाले कुल जल में कमी भारत के नैटकॉम ५ (एनएटीसीओएम) में अनुमानित की गई है। सारमती और लूनी द्रोणियों के लिए भी जल बहाव में दो–तिहाई से अधिक की गिरावट का अनुमान लगाया गया है। समुद्र–तल में वृद्धि के कारण, तटीय क्षेत्रों के निकट स्थित ताले जल के स्रोत लवण की मात्रा से प्रभावित होंगे।

कृशि तथा खाद्य उत्पादन पर प्रभाव

भारत में खाद्य–उत्पादन जलवायु परिवर्तनों के प्रति संवेदनषील हैं जैसे मानसून की वर्शा में अस्थिरता तथा किसी मौसम के मध्य तापमान में परिवर्तन। भारतीय कृशि अनुसंधान संस्थान (आईएआरआई) तथा अन्य द्वारा किए गए अध्ययनों ने रबी फसल में अत्यधिक अनुमानित घाटा दर्षाया है। तापमान में 1° से. की प्रत्येक वृद्धि गेहूं के उत्पादन में 4–5 मिलियन टन की कमी कर देती है। तापमान और वर्शा में छोटे–छोटे परिवर्तन फलों, सब्जियों, चाय, कॉफी, सुगंधित और औशधीय पादपों, और बासमती चावल की गुणवत्ता में उल्लेखनीय प्रभाव डालते हैं। रोगाणुओं तथा कीटों की जनसंख्या

तापमान और आर्द्रता पर अत्यधिक निर्भर रहती है तथा इन मानदण्डों में परिवर्तन उनकी जनसंख्या की गत्यामकता को बदल सकता है। कृशि तथा संबद्ध क्षेत्रों पर अन्य प्रभाव हैं, डेयरी मवेषियों से कम मात्रा में दुग्ध तथा मत्स्य प्रजनन, प्रवास और पैदावार में कमी। वैष्विक रिपोर्टे 2100 तक फसल उत्पादन में 10–40 प्रतिषत का घाटा दर्षाती हैं।

भारत की जलवायु पर दक्षिण–पष्चिमी मानसून का आधिपत्य है, जो क्षेत्र की अधिकांष वर्शा को लेकर आता है। यह पेयजल की उपलब्धता तथा कृशि के लिए सिंचाई हेतु अत्यंत महत्वपूर्ण है। कृशीय उत्पादकता जलवायु–प्रेरित प्रभावों के दो व्यापक वर्गों के प्रति संवेदनषील है (प) तापमान, वर्शा अथवा कार्बन डाइऑक्साइड संकेन्द्रणों में परिवर्तन से प्रत्यक्ष प्रभाव, तथा (2) मृदा की आर्द्रता और वितरण तथा कीटों एवं रोगों द्वारा संक्रमण की बारंबारता में परिवर्तनों के माध्यम से अप्रत्यक्ष प्रभाव। चावल और गेहूं की पैदावार में जलवायु परिवर्तनों के साथ पर्याप्त रूप से गिरावट आती है (आईसीसी 1996; 2001)। तथापि, जलवायु परिवर्तन के प्रति कृशि उत्पादनों की सुमेद्यता न केवल प्रभावित पादप की मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रिया पर निर्भर करती है, बल्कि पैदावार में परिवर्तनों और साथ ही सूखे एवं बाढ़ की बारंबारता में परिवर्तनों का सामना करने के लिए उत्पादन की प्रभावित सामाजिक–आर्थिक प्रणालियों की योग्यता पर भी निर्भर करती है। भारत में किसानों की अनुकूलनता प्राकृतिक कारकों पर अत्यधिक निर्भरता तथा सम्पूरक इनपुटों और संस्थागत सहायता प्रणालियों के अभाव द्वारा पर्याप्त रूप से सीमित होती है। तापमान में 2° से. से 3.5° से. तक की वृद्धि के लिए फार्म स्तर पर निवल राजस्व में होने वाली हानि का अनुमान 9 प्रतिषत से 25 प्रतिषत के बीच लगाया गया है। वैज्ञानिकों ने यह अनुमान भी लगाया है कि माध्य तापमान में 2° से. की वृद्धि तथा माध्य वर्शा में 7 प्रतिषत की बढ़ोतरी देष के समग्र राजस्व को 12.3 प्रतिषत तक कम कर देगी। गुजरात, महाराश्ट्र और कर्नाटक के तटीय क्षेत्रों में कृशि को सर्वाधिक नकारात्मक रूप से प्रभावित होता हुआ पाया गया है। पंजाब, हरियाणा और पष्चिमी उत्तर प्रदेष के प्रमुख खाद्यान्न उत्पादक क्षेत्रों में छोटे नुकसानों की घोशणा भी की गई है। दूसरी ओर, पष्चिम

बंगाल, उड़ीसा और आंध्र प्रदेष के उश्मण से कुछ हद तक लाभान्वित होने का अनुमान लगाया गया है।

स्वास्थय पर प्रभाव

जलवायु में परिवर्तन महत्वपूर्ण वाहक प्रजातियों (उदाहरण के लिए मलेरिया के मच्छर) के वितरण को परिवर्तित कर सकता है तथा ऐसे रोगों को नए क्षेत्रों में फैला सकता है। यदि तापमान में 3.8° से. की वृद्धि होती है तथा सापेक्षी आर्द्रता 7 प्रतिषत तक बढ़ती है, तो संचरण वातायन, अर्थात वे माह जिनमें मच्छर सक्रिय होते हैं, भारत में 9 राज्यों में सभी बारह महीनों के लिए खुल जाएंगें। जम्मू–कष्मीर तथा राजस्थान में संचरण वातायनों में 3–5 माह की वृद्धि हो जाएगी। तथापि, उड़ीसा तथा कुछ दक्षिणी राज्यों में, तापमान में आगे वृद्धि द्वारा संचारण वातायन 2–3 माह तक कम होने की संभावना है।

वनों पर प्रभाव

जलवायु संबंधी अनुमान यह दर्षाते हैं कि देष वन उत्पाद में पारिणामिक परिवर्तनों सहित वन प्रकारों में परिवर्तन का अनुभव कर सकता है तथा इसके परिणामस्वरूप इन उत्पादों के आधार पर आजीविकाएं भी प्रभावित होती हैं। तदनुसार, सहयोजित जैव–विविधता के भी प्रतिकूल रूप से प्रभावित होने की संभावना है।

प्रचण्ड घटनाओं के प्रति सुभेद्यता

अत्यधिक आबादी वाले क्षेत्र जैसे तटीय क्षेत्र जलवायु संबंधी घटनाओं चक्रवात, बाढ़, सूखा आदि से प्रभावित होते हैं तथा षुश्क और अर्ध–षुश्क अंचलों में प्रचण्ड जलवायु के दौरान बोए गए क्षेत्रों में पैदावार में भारी गिरावट होती है। राजस्थान, आंध्र प्रदेष, गुजरात और महाराश्ट्र के विषाल क्षेत्रों तथा कर्नाटक, उड़ीसा, मध्य प्रदेष तमिलनाडु, बिहार, पष्चिम बंगाल और उत्तर प्रदेष के तुलनात्मक रूप से छोटे क्षेत्रों में बार–बार सूखा पड़ता है। लगभग 40 मिलियन हैक्टेयर भूमि सूखा–प्रवण है जिसमें उत्तर तथा उत्तर–पूर्वी पट्टी में स्थित अधिकांष नदियों की द्रोणियां षामिल हैं, जिसके फलस्वरूप प्रत्येक वर्श औसतन लगभग 30 मिलियन लोग प्रभावित होते हैं।

तटीय क्षेत्रों पर प्रभाव

21वीं षताब्दी के मध्य तक भारत के तटीय क्षेत्रों में माध्य समुद्र स्तर वृद्धि (एसएलआर) 15–38 सेमी. तथा 2100 तक 46–59 सेमी. तक होने का अनुमान है। इसके अलावा, उश्णकटिबंधीय चक्रवातों की प्रचण्डता में होने वाली अनुमानित वृद्धि देष में अत्यधिक आबादी वाले तटीय अंचलों के लिए एक खतरा पैदा करती है (नेटकॉम, 2004)

जैव–विविधता पर प्रभाव

जलवायु परिवर्तन पर अंतर्राश्ट्रीय पैनल ने यह अनुमान लगाया है कि 21वीं षताब्दी के दौरान वैष्विक औसत तापमान वृद्धि 1.4° से. 4° सेल्सियस के बीच होगी। निर्धनों की तीन प्रमुख फसलों

अर्थात् मूंगफली, लोबिया और आलू के जंगली संबंधियों के वितरण मॉडल पर आधारित अंतर्राश्ट्रीय कृशीय अनुसंधान परामर्ष समूह द्वारा किए गए अनुसंधान ने यह दर्षाया है कि जंगली प्रजातियों की 15–22 प्रतिषत किस्में 2055 तक विलुप्ति के संकट का सामना करेंगी। जैविक विविधता की हानि के समूचे विष्व पर दीर्घकालिक गंभीर परिणाम हो सकते हैं।

कीटों पर प्रभाव

कीटों और रोगों पर जलवायु परिवर्तन के कुछ सर्वाधिक नाटकीय प्रभावों के संधिपाद कीटों जैसे मच्छरों, लघु–मच्छरों, खटमलों, पिस्सुओं तथा सैंड फ्लाई तथा उनके द्वारा वाहित किए जाने वाले वायरसों के मध्य देखे जाने की संभावना है। तापमान और आर्द्रता स्तरों में परिवर्तन के साथ इन कीटों की जनसंख्या अपनी भौगोलिक परिधि में भी विस्तार कर लेती है, तथा ऐसे जानवरों और मनुश्यों को रोग संचरित करते है जिनके पास प्राकृतिक प्रतिरक्षण–षक्ति का अभाव होता है। पादप कीट, जिनमें कीट–पंतगे, रोगाणु और खरपतवार षामिल हैं, खाद्य और कृशि उत्पादन के लिए सबसे बड़ी बाधा बने रहना जारी हैं। उदाहरण के लिए, फ्रूट फ्लाई फलों और सब्जियों को अत्यधिक क्षति कारित करती है। ऐसे कीटों को नियंत्रित करने के लिए प्रायः कीटनाषकों के प्रयोग की आवष्यकता होती है जिनके मानव–स्वास्थ्य और पर्यावरण पर गंभीर परिणाम हो सकते हैं। जलवायु परिवर्तन खाद्य सुरक्षा में भी एक महत्वपूर्ण भूमिका निर्वाह करता है। कीटों और रोगों की बढ़ती हुई संख्या के परिणामस्वरूप स्थानीय खाद्य आपूर्ति में कीटनाषक अवषिश्टों और पषु औशधियों के उच्च और प्रायः असुरक्षित स्तर उत्पन्न हो सकते हैं। तथा वर्शा, तापमान और सापेक्षी आर्द्रता में परिवर्तन तत्काल ही मूंगफली, गेहूं, मक्का, चावल और कॉफी जैसे खाद्य–पदार्थों को ऐसे कवकों द्वारा संदूशित कर सकता है जो पर्याप्त हानिकारक माइकोटॉक्सिन उत्पन्न करते हैं।

(I) **बढ़ते हुए तापमान के प्रभावः** सौम्य जलवायु में बढ़ा हुआ तापमान कीटों की जनसंख्या में वृद्धि कर सकता है। निरंतर बढ़ता तापमान कीटों की उत्तरजीविता, विकास, भौगोलिक परिधि तथा जनसंख्या आकार को प्रभावित कर सकता है। यह कीटों के षरीरविज्ञान को भी प्रभावित करता है। ऐसी परिस्थितियों में, कुछ कीट अपने जीवन–चक्र को पूरा करने के लिए अनेक वर्श ले सकते हैं (किकाडास, आर्टिक मॉथ) तथा कुछ कीट अंष दिवसों के आधार पर कतिपय तापमान परिधि में तेजी के साथ विकसित होते हैं (गोभी के कीड़े, प्याज के कीड़े, यूरोपियन कॉर्न बोरर, कोलोराडो पोटाटो बीटल, एफिड्स, डायमंड बैक मॉथ)। अतः फसल का नुकसान बढ़ जाता है। प्रवासी कीट पहले प्रवास कर लेते हैं। प्राकृतिक षत्रु–मेजबान संबंध–प्रभावित होता है जिसके फलस्वरूप परजीवियों की संख्या में कमी आती है। बढ़ता हुआ तापमान कीटों जैसे थ्रिप्स के लिंग अनुपातों में परिवर्तन करता है। उश्ण षीत के परिणामस्वरूप कीटों की निम्न षीत मृत्युदर के कारण कीटों की जनसंख्या में वृद्धि होती है। उच्च तापमानों के कारण फसलों का भौगोलिक रूप से स्थानांतरण होता है अतः इसके कीट भी उच्च तुंगता में अंतरित होते है। जीवाष्मों के अभिलेखों से, यह समझा गया है कि कीट प्रजातियों की विविधता तथा उनके आहार की गहनता तापमान में वृद्धि के साथ बढ़ जाती है। बढ़े हुए तापमान कुछ ऐसी फसलों में कीटों की जनसंख्या को कम कर देते हैं (एफिड्स), जो उच्च तापमान में नहीं उगाई जा सकती हैं। यही स्थिति उस कीट के प्राकृतिक षत्रुओं के सवंर्धित क्रियाकलापों के लिए अनुकूल होती है जिससे इसकी जनसंख्या में और कमी आ जाती हैं।

(II) **वर्शा के प्रभावः** वर्शा की बूंदें भौतिक रूप से कीटों को उनके मेजबानों से अलग कर देती हैं जैसे लीफ हॉपर, प्लांट हॉपर, कीट, कृत्य–कृमि आदि जबकि अन्य पानी में डूबकर मर जाते हैं, जैसे मीली बग, फ्रूट फ्लाई का प्यूपा, हेलीकोवर्पा, स्पोडोप्टेरा, एटीला, राइस स्टेम बोरर आदि। दीमकों तथा तनों पर छिद्र करने वाले कीटों के लिए एक नियंत्रणकारी उपाय के रूप में फ्लडिंग का प्रयोग

भी किया जाता है। भारी वर्शा कवक रोगाणुओं (गन्ने के पाइरिला) द्वारा कीट एपीजूटिक्स उत्पन्न करती है। यह अनुमान लगाया गया है कि कृंत्य–कृमि जन्तुबाधा भविश्य में अधिक होगी क्योंकि अधिक जल तथा ग्रीश्मकालीन वर्शा के प्रति अधिक संवेदनषील है, जिसमें भविश्य में वृद्धि होगी।

(III) **बढ़ते हुए बव$_2$ स्तर के प्रभावः** कार्बन डाइआक्साइड ऐसे परिवर्तन का एक सटीक उदाहरण है जिसके सकारात्मक और नकारात्मक, दोनों प्रभाव हो सकते हैं। सवंर्धित प्रकाष–संष्लेशण के माध्यम से कार्बन डाइऑक्सराइड के सकारात्मक कियात्मक प्रभाव हो सकते हैं। यह प्रभाव मक्का और घास जैसे ब$_4$ पादपों की तुलना में गेहूं और चावल जैसी ब$_3$ फसलों पर अधिक होता है। कार्बन डाइआक्साइड संकेन्द्रण में परिवर्तनों के प्रत्यक्ष प्रभाव तापमान, वर्शा और विकिरण में परिवर्तनों के माध्यम से होते हैं। तथापि, अप्रत्यक्ष प्रभाव बढ़ते हुए तापमान और सापेक्षी आर्द्रता के कारण कीटों और रोगों द्वारा मृदा आर्द्रता और जन्तुबांधा में परिवर्तन लाते हैं। तापमान में वृद्धि के माध्यम से ऐसे अप्रत्यक्ष प्रभाव फसल की अवधि को कम करेगें, फसल की ष्वसन दर में वृद्धि करेंगे, वाश्प–उत्सर्जन करेंगे, उर्वरक प्रयोग की कार्यकुषलता में कमी करेंगे तथा कीटों की जन्तुबाधा में वृद्धि करेंगे। इस संबंध में आम सहमति है कि मुख्य मौसम (खरीफ) फसल की पैदावार में उच्च कार्बन डाइऑक्साइड स्तरों के प्रभाव के कारण वृद्धि होगी। तथापि, बढ़े हुए तापमान के कारण रबी फसल के लिए पैदावार में भारी कमी का अनुमान लगाया गया है। वायुमण्डल में कार्बन डाइऑक्साइड का बढ़ता हुआ स्तर कीट जनसंख्या पर अप्रत्यक्ष प्रभाव डालता है। उच्च कार्बन डाइऑक्साइड संकेन्द्रण में सोयाबीन की फसल में पूर्व की तुलना में 57 प्रतिषत अधिक कीट क्षति थी (जापानी बीटल, लीफहॉपर, रूट, वॉर्म, मैक्सिकन बीन बीटल)। इसने पत्तियों में सामान्य षर्करा के स्तर में वृद्धि कर दी जिससे कीटों, द्वारा उन्हें अधिक क्षति पहुंचाई गई। कार्बन डाइऑक्साइड के बढ़े हुए स्तर के कारण पादप ऊत्तक में सी/एन अनुपात में वृद्धि कीटों के विकास को धीमा करती है तथा कीटों के जीवन–चक्र की अवधि को बढ़ाती है जिससे वे परजीवीनाषकों के हमले के

प्रति अधिक सुभेद्य हो जाते हैं, ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन की विद्यमान दर पर, ऐसे प्रमुख कीटों, जो मक्का को निषाना बनाते हैं, की संख्या में वृद्धि हो जाएगी तथा वे 21वीं षताब्दी की समाप्ति तक अपनी परिधि में विस्तार कर लेंगे।

(IV) **कीटनाषक प्रयोग कार्यकुषलता पर प्रभावः** मक्का के कीटों पर नियंत्रण करने के लिए गर्म तापमान में अधिक संख्या में कीटनाषक अनुप्रयोगों की आवष्यकता होती है (अर्थात् सामान्य से तीन अधिक)। कीटविज्ञानी गर्म जलवायु में कीटों की अधिक संख्या का अनुमान लगाते है जिसके लिए कीटनाषकों के अनुप्रयोगों की भी अधिक मात्रा की आवष्यकता होगी। यह उत्पादन की लागत तथा पर्यावरणीय प्रदूशण में वृद्धि करेगा। उच्च तापमानों में संष्लिश्ट पाइरेथेरॉयड्स और नैचुरालाइट स्पिनोसैड कम प्रभावी होंगे। अतः किसानों के लिए यह परामर्षनीय है कि वे अनुप्रयोगों की अधिक संख्या के मामले में प्रतिरोध–क्षमता के विकास को दूर करने के लिए बार–बार समान कार्रवाई के साथ कीटनाषकों का प्रयोग न करें। सांस्कृतिक प्रबंध प्रक्रियाएं अर्थात् जल्द रोपण सहायक नहीं होगा क्योंकि गर्मी के कारण कीटों का षीघ्र अभ्युदय हो जाएगा।

(V) **प्राकृतिक कीट नियंत्रण पर प्रभावः** वैष्विक तापन द्वारा क्षेत्रीय जलवायु के अधिक विविधतापूर्ण तथा गैर–अनुमानयोग्य होने का अनुमान है जो कीटों तथा उनके प्राकृतिक षत्रुओं के बीच संबंधों को प्रभावित कर सकती है। सर्वाधिक अस्थिर वर्शा की अवधियों में, इल्ली में पैरासिटॉयड्स की संख्या अत्यंत कम देखी गई। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि पैरासिटॉयड्स अंडे देने के लिए श्रेश्ठ समय का निर्धारण करने के लिए संकेतों अर्थात स्थानीय जलवायु में परिवर्तन का प्रयोग करता है। गैर–अनुमानयोग्य वर्शा पैरासिटॉयड्स की अपने इल्ली मेजबान की तलाष करने की क्षमता को बाधित करती है। वास्प वर्शा आरंभ होने को उसके कोकून से बाहर आने के सही समय के रूप में संकेत के रूप में लेता है तथा अपने अंडे देने के लिए इल्ली की तलाष करता है। यदि वर्श में

विलंब होता है, तो उनका जन्म भी देर से होता है तथा वे मेजबान के लार्वा चरण तक नहीं पहुंच पाते है जिससे प्राकृतिक कीट नियंत्रण में कमी होती है। जलवायु में परिवर्तन के कारण, सूखे, गर्म हवाओं, धूल भरी आंधियों तथा बाढ़ आदि के बार–बार आने की संभावनाएं बढ़ जाती है जिससे प्राकृतिक पारिस्थितिकी बाधित होती है।

(VI) **वन्य कीट–पतंगों पर प्रभावः** जलवायु परिवर्तन का वन्य कीट–पतंगों पर पड़ने वाले प्रभाव का पूर्वानुमान लगाना कठिन है क्योंकि कीटों तथा वृक्षों के बीच पारस्परिक संबंध अत्यंत जटिल होते हैं। वैष्विक तापन के कारण ग्रीन स्प्रूस एफिड (एलाटोबियम एबीटिनम) की संख्या में वृद्धि होती है। तापन के कारण स्प्रूस बार्क बीटल (डेंट्रोक्टोनस मिकांस) की संख्या में वृद्धि होती है क्योंकि इसके षिकारी रीजोफेगस ग्रैंडिस तापमान में वृद्धि के कारण लाभान्वित होते हैं। गर्म तटीय क्षेत्रों में एषियन लांग हॉर्न बीटल (एनोप्लोफोरा ग्लैब्रिपेनिस) की जनसंख्या में वृद्धि होती है, जो सड़क के वृक्षों पर हमला करते हैं। सामान्यतः यह माना गया है कि जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप अनेक वन्य कीट–पतंगों में वृद्धि होती है। इसके साथ–साथ, यह भी स्वाभाविक है कि कीटों के प्राकृतिक षत्रु भी इससे लाभान्वित होंगे। अतः किसी हद तक यह स्पश्ट नहीं है कि वैष्विक जलवायु परिवर्तन का समग्र प्रभाव वन्य कीट–पतंगों पर क्या होगा।

रोगों पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव

बढ़ी हुई कार्बन डाइआक्साइड की मात्रा अथवा जलवायु परिवर्तन द्वारा कारित किया कोई भी प्रत्यक्ष लाभ पादपभक्षी कीटों, पादप रोगजनकों तथा खरपतंवार द्वारा आंषिक या पूर्णतः समाप्त हो सकता है। अतः जलवायु परिवर्तन के अंतर्गत फसल पैदावार की इन जैविक बाधाओं पर विचार करना महत्वपूर्ण है।

;प्द्ध **पादप रोगप्रणालियों पर प्रभावः** जलवायु परिवर्तन के पास मेजबान के षरीर विज्ञान तथा प्रतिरोध–क्षमता में संषोधन करने तथा रोगजनकों के विकास की अवस्थाओं तथा दरों को परिवर्तित करने

की क्षमता विद्यमान है। सर्वाधिक संभावित प्रभाव होंगे–मेजबान और रोगजनक के भौगोलिक वितरण में परिवर्तन, मेजबान–रोगजनक संपर्कों के क्रियाविज्ञान में परिवर्तन तथा फसल नुकसान में परिवर्तन। एक अन्य महत्वपूर्ण प्रभाव होगा नियंत्रण कार्यनीतियों की प्रभावकारिता में परिवर्तन।

;प्प्द्ध **मेजबान और रोगजनक का भौगोलिक वितरणः** यदि तापन कृशि जलवायु अंचलों को आर्जवगामी अंतरण कारित करता है और मेजबान पादप नए क्षेत्र में अंतरित होता है, तो नए रोग की जटिलताएं उत्पन्न हो जाएंगी तथा कुछ रोग आर्थिक दृश्टि से महत्वपूर्ण नहीं रहेंगे। रोगजनक अंतरित होने वाले मेजबान का पीछा करेंगे तथा प्राकृतिक पादप पण्यों की अनियंत्रित वनस्पति को संक्रमित कर देंगे जो पूर्व में कृशीय फसलों से अधिक आक्रामक धब्बों के प्रति अनावृत्त नहीं हुई थी। रोगजनक प्रकीर्णन, प्रकीर्णन के लिए पर्यावरण की उपयुक्तता, मौसमों के बीच उत्तरजीविता तथा नए पर्यावरण में मेजबान क्रियाविज्ञान एवं पारिस्थिकी में कोई परिवर्तन मुख्य रूप से यह अवधारित करेगा कि रोगजनक कितनी तेजी के साथ नए क्षेत्र में स्थापित हो सकते हैं। रोगजनकों के प्रकार, मात्रा तथा सापेक्षी महत्व में परिवर्तन हो सकते हैं तथा वे किसी फसल–विषेश को प्रभावित करने वाले रोगों के स्पेक्ट्रम को प्रभावित करते हैं। ऐसा वैकल्पिक मेजबानों वाले रोगजनकों के साथ अधिक स्पश्ट रूप से हो सकता है। सीमांत जलवायु में उगने वाले पादप प्राचीन तनाव का अनुभव कर सकते हैं, जो उन्हें कीटों और रोगों के फैलने की स्थिति पर रक्षा के लिए तैयार करेगा। तापन तथा अन्य परिवर्तन पादपों को रोगजनकों द्वारा क्षतिग्रस्त होने के प्रति और सुभेद्य बना सकते हैं, जो गैर–अनुकूल जलवायु के कारण वर्तमान में महत्वपूर्ण नहीं होते हैं।

;प्प्द्ध **मेजबान रोगजनक संपर्कों का क्रियाविज्ञान–उत्थापित** कार्बन डाइऑक्साइडः पत्ती के क्षेत्र और अवधि में वृद्धि, पत्ती की मोटाई, प्रषाखन, अंतर्भूस्तरी, तने और जड़ की लंबाई और षुश्क भार अनेक पादपों पर वर्धित कार्बन डाइऑक्साइड के जाने–माने प्रभाव हैं। वैज्ञानिकों ने यह बताया है कि उत्थापित कार्बन डाइऑक्साइड षिखर के आकार तथा घनत्व में वृद्धि करती है जिसके परिणामस्वरूप उच्च पोशक गुणवत्ता का अत्यधिक बायोमास प्राप्त होता है। जब इसे वर्धित षिरा आर्द्रता के साथ संयोजित किया जाता है, तो इसके पत्तों के रोगों को प्रोत्साहित करने की संभावनाएं हो जाती हैं, जैसे जंग, चूर्ण के स्वरूप वाली

फफूंदी, पत्ते पर धब्बे और चित्तियां। पादप के अवषिश्ट का अपक्षय पोशण चक्र में तथा अनेक रोगजनकों के मृतभक्षियों की उत्तरजीविता में एक महत्वपूर्ण कारक है। अपषिश्ट का सवंर्धित सीः एनअनुपात उत्थापित कार्बन डाइऑक्साइड के अंतर्गत पादप विकास का परिणाम है। वेज्ञानिकों ने यह दर्षाया है कि उच्च–कार्बन डाइऑक्साइड अपषिश्ट का अपक्षय एक निम्न दर पर घटित होता है। संवर्धित पादप बायोमास, अपषिश्ट का धीमा अपक्षय तथा उच्च षीत तापमान अति–प्रषीतित फसल अवषिश्ट पर रोगजनक की उत्तरजीविता में वृद्धि करता है तथा पष्चातवर्ती फसलों को संक्रमिक करने के लिए उपलब्ध प्रारंभिक संचारण की मात्रा में वृद्धि करता है। चयनित कवकीय रोगप्रणालियों में मेजबान–रोगजनक के संपर्कों के फलस्वरूप उत्थापित कार्बन डाइआक्साइड के प्रभावों पर दो महत्वपूर्ण प्रवृत्तियां उभरती हैं। पहली, रोगजनकों की प्रारंभिक स्थापना रोगजनक की आक्रामकता और/अथवा मेजबान की संवेदनषीलता में परिवर्तनों के कारण विलंबित होती है। दूसरा महत्वपूर्ण निश्कर्श उत्थापित कार्बन डाइऑक्साइड के अंतर्गत रोगजनकों की उत्पादकता में वृद्धि होना है।

;प्टद्ध **उत्थापित तापमानः** तापमान में वृद्धि मेजबान के क्रियाविज्ञान तथा प्रतिरोधक–क्षमता को आषोधित कर सकती है। उश्मा–प्रेरित संवेदनषीलता तथा तापमान–संवेदी जीनों पर पर्याप्त जानकारी उपलब्ध है। इसकी तुलना में, कवकीय रोगजनकों की प्रतिरोध–क्षमता में वृद्धि के लिए कोषिका दीवारों का काश्ठीकरण उच्च तापमानों में रातिब प्रजातियों में संवर्धित हुआ। अतः प्रभाव मेजबान–रोगजनक के संपर्कों तथा प्रतिरोध के तंत्र की प्रकृति पर निर्भर करता है। प्राकृतिक समुदायों में कृशीय फसलें और पादप लक्षणविहीन वाहकों के रूप में रोगजनकों को आश्रय दे सकती हैं तथा रोग तब विकसित हो सकता है, जब पादपों को उश्ण जलवायु में प्रतिबलित किया जाता है। मेजबान का तनाव विभिन्न वन प्रजातियों के पतन में एक विषिश्टतः महत्वपूर्ण कारक है।

फसल की हानिः उत्थापित कार्बन डाइऑक्साइड पर जड़ों तक परिपाचकों का संवर्धित विभाजन निरंतर इन फसलों में होता है, जैसे गाजर, चुकुंदर और मूली। यदि जड़ों में अधिक कार्बन डाइआक्साइड भण्डारित

जाएगी, तो जड़ फसलों के मृदा–जनित रोगों से हानियां जलवायु परिवर्तन के अंतर्गत कम हो जाएंगी। इसकी तुलना में, जलवायु परिवर्तन के अंतर्गत उच्च तापमान और आर्द्रता, तापमान और वृश्टिपात में वृद्धि के परिणामस्वरूप फसल की हानि में वृद्धि हो सकती है। उत्थापित कार्बन डाइऑक्साइड से हद् षिराओं के प्रभाव पत्तियों के रोगवाहकों से फसलों के नुकसान में वृद्धि कर सकते हैं।

जलवायु परिवर्तन पर आईसीएआर के अनुसंधान के निश्कर्शः कृशि प्रणाली पर जलवायु परिवर्तन द्वारा प्रस्तुत की गई चुनौतियों का सामना करने के लिए आईसीएआर ने जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को समझने तथा अपने नेटवर्क अनुसंधान कार्यक्रमों के माध्यम से अनुकूलन और न्यूनीकरण कार्यनीतियां विकसित करने के लिए उच्च प्राथमिकताएं प्रदान की हैं। इन अनुसंधान निश्कर्शों में से कुछ इस प्रकार हैंः–

- ❖ प्रथम और द्वितीय अंकुरण स्तरों पर रेंडी फसल की विकास और पैदावार प्रतिक्रिया ने संवर्धित कार्बन डाइऑक्साइड के प्रति सकारात्मक प्रतिक्रिया दर्षाई।
- ❖ हिमाचल प्रदेष की पाम वैली में गेहूं की जल्द और देरी से उगाई गई किस्मों में प्रजनन चरण (पुश्पण के दिन) और परिपक्वता चरण 5 से 15 दिन तक कम हो गए।
- ❖ चावल के प्रजनन चरण में एक से दस दिन की कमी पालमपुर क्षेत्र में देखी गई।
- ❖ हिमालय क्षेत्र में 1° से. से ऊपर तापमान में वृद्धि सेब की पैदावार को प्रतिकूल रूप से प्रभावित कर रही है।
- ❖ हिमाचल प्रदेष में, निम्न (1100 मी.) और मध्य (1800–2000 मी.) पर वर्शा का उत्थापन नीचे गिर गया है तथा दोशपूर्ण रहा है। उच्चतर श्रृंखलाओं में हिमपात हाज के वर्शों में 10 फुट से (40 वर्श पूर्व) गिरकर 1–2 फुट हो गया है।
- ❖ उत्थापन पर (1700–2000 मी.) देवदार, केल और खरसू सूख रहे हैं और मर रहे हैं (पीला पड़ना), जबकि उच्च उत्थापन पर (2500 मी.) षिमला क्षेत्र में ओक में कीटों का हमला देखा गया।

- तापमान में 2–6° से. तक की वृद्धि संकरों तथा भैंसों के विकास, यौवन और परिपक्वता को प्रभावित करती है। यौवन प्राप्त करने के समय में उच्च तापमान में विकास की दरों में कमी के कारण 1–2 सप्ताह का विलंब हुआ।
- अधिकतम और न्यूनतम तापमानों में 22° से. से अधिक वृद्धि होने के कारण हाल्स्टेन फ्रीसियान संकर गायों में दुग्ध उत्पाद प्रभावित हुआ। तापमान में 2° से. से ऊपर की वृद्धि के साथ मुर्रा भैंसों में दुग्ध उत्पादन में कमी भी देखी गई। गर्म हवाओं (ढ 4° से.) तथा षीत लहरों (ढ 3°से.) जैसी अत्यंत उग्र घटनाओं ने मवेषियों और भैसों में प्रथम दुग्धस्रवण में दुग्ध की पैदावार में 10–30 प्रतिषत की तथा द्वितीय और तृतीय दुग्धस्रवण में 5–20 प्रतिषत की कमी की।
- 485 मिलियन मवेषियों के आन्त्र किण्वन तथा उर्वरक प्रबंधन के कारण कुल मीथेन उत्सर्जन वर्श 2006 के लिए 9.36 टीजी/वर्श आकलित किया गया। यह वर्श 2003 में 9ण्36 टीजी/वर्श था।
- मवेषियों (संकर स्टीयर्स) में मीथेन उत्सर्जन में कमी उनके आहार में परिवर्तन करके प्राप्त की गई जिसमें फेनूग्रीक बीजों (ट्रिगोनेला फोरम) को षामिल किया गया।
- दक्षिण पष्चिमी, उत्तर पष्चिमी और पूर्वोत्तर तटों में सतहीय समुद्र तापमान (एसएसटी) के रूझानों ने 0.045° से. प्रति दषक की दर पर उल्लेखनीय वृद्धि दर्षाई जबकि दक्षिण पूर्वी तट पर 0.095° से. प्रति दषक की वृद्धि दर देखी गई।
- ऑयल सरडाइन मछली, जिसे 8° उत्तर से 12° उत्तर के दक्षिण पष्चिमी तट पर सीमित रखा गया था, को अन्य तटीय क्षेत्रों तक भी विस्तारित किया गया तथा बढ़ते हुए एसएसटी के साथ विद्यमान अनुकूल पर्यावरण के कारण उन्हें बंगाल की खाड़ी में उड़ीसा और पष्चिम बंगाल तक भी विस्तारित किया गया।

- ❖ पंटियम टिकटो, जेनेनटोडन कैंसिला, माइस्टस विट्टारस और ग्लोसोगोबियस गियूरिस, आदि जैसी निम्न खण्डों में रहने वाली मत्स्य प्रजातियों को नदी में 17.5° से. से 25.5° से. तक के औसत तापमान पारिस्थिति की में हुई वृद्धि के कारण हरिद्वार में गंगा नदी के षीत जल रिथ्रोन जोन में अंतरित किया गया।

भारत में अनुकूलन और अंतरण के लिए कतिपय विद्यमान कार्रवाइयां

जलवायु परिवर्तन के संदर्भ में अनुकूलन में जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभावों को न्यूनतम करने के लिए किए गए उपाय षामिल होते हैं उदाहरण के लिए समुद्र के बढ़ते हुए स्तर से निपटने के लिए समुद्रतटों के निकट रहने वाले समुदायों का पुनर्स्थापन करना अथवा ऐसी फसलों को अपनाना जो उच्च तापमानों में फल–फूल सकें। न्यूनीकरण में ताप–विद्युत केंद्रों में जीवाष्म ईंधन को जलाने के स्थान पर सौर ऊर्जा अथवा पवन ऊर्जा अथवा आण्विक ऊर्जा के नवीकरणीय स्रोतों तक अंतरण करके उन ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को कम करना षामिल है, जो प्रारंभिक अवस्था में जलवायु परिवर्तन कारित करती हैं।

जलवायु अस्थिरता के अनुकूलन के लिए भारत में विद्यमान सरकारी व्यय कृशि, जल संसाधनों, स्वास्थ्य और स्वच्छता, वन, तटीय–अंचल अवसंरचना तथा उग्र मौसमीय घटनाओं के चिंता के विषिश्ट क्षेत्रों के साथ जीडीपी के 2.0 प्रतिषत से अधिक हो गया है।

कार्यक्रम

फसल सुधारः यह कार्यक्रम अनेक उपाय करता है जैसे षुश्क–भूमि फसलों का विकास और कीट नियंत्रण तथा बेहतर संवेदनषीलता–न्यूनीकरण प्रक्रियाओं को सहायता देने के लिए विस्तार कर्मियों और एनजीओ की क्षमता का निर्माण।

सूखे का नियंत्रणः विद्यमान कार्यक्रम फसलों और पषुधन के उत्पादन, तथा भूमि, जल और मानव संसाधनों की उत्पादकता पर सूखे के प्रतिकूल प्रभावों को न्यूनतम बनाता है ताकि अंततः प्रभावित क्षेत्रों में सूखे को

नियंत्रित किया जा सके। उनका उद्देष्य समग्र आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करना तथा संसाधनविहीन और वंचित लोगों की सामाजिक–आर्थिक परिस्थितियों में सुधार लाना भी है।

वानिकीः भारत में एक सषक्त और तेजी से विकसित होता वनीकरण कार्यक्रम विद्यमान है। वनीकरण प्रक्रिया को 1980 के चन संरक्षण अधिनियम के अधिनियमन के बाद से तेज किया गया है जिसका उद्देष्य वन भूमि के प्रयोग के लिए अधिकारों के कड़े और केन्द्रीयकृत नियंत्रण के माध्यम से वनों की कटाई और उनके अपक्षय को रोकना है तथा इनमें किसी गैर–वानिकी प्रयोजन के लिए वन भूमि के किसी विपथन के मामले में प्रतिपूर्ति के रूप में वनीकरण करने की अनिवार्य अपेक्षा भी षामिल है। इसके अलावा, एक गहन वनीकरण तथा संपोशणीय वन प्रबंधन कार्यक्रम के परिणामस्वरूप वर्श 1985–1997 के दौरान 1.78 मि. है. का वार्शिक वनीकरण भी किया गया है तथा वर्तमान में यह प्रतिवर्श 1.1 मि.है. है। इसके कारण, भारतीय वनों में कार्बन के भण्डार में पिछले 20 वर्शों में अर्थात 1986 से 2005 के दौरान 9–10 गीगाटन कार्बन (जीटीसी) के वृद्धि हुई है।

जलः राश्ट्रीय जल नीति (2002) इस बात पर बल देती है कि जल के उपयोग के लिए गैर–पारंपरिक पद्धतियों का प्रयोग उपयोगयोग्य जल संसाधनों में वृद्धि करने के लिए किया जाना चाहिए जिनमें षामिल हैं–अंतर्द्रोणी अंतरण, भूमिगत जल का कृत्रिम पुनः आवेषन, खारे और समुद्री जल को लवण–मुक्त बनाना तथा साथ ही पारंपरिक जल संरक्षण प्रक्रियाएं अपना जैसे, वर्शा जल संचयन, जिसमें छत पर वर्शा जल को संचयित करना षामिल है। अनेक राज्यों ने विभिन्न षहरों में अनिवार्य जल संचयन कार्यक्रम आरंभ किए हैं।

तटीय क्षेत्रः तटीय क्षेत्रों में 200 एम से 500 एम के बीच एचटीएल (उच्च लहर पंक्ति) के क्षेत्रों में सीमाएं अधिरोपित की गई हैं जबकि 200 एम से उच्च के क्षेत्र में विषेश सीमाएं लगाई गई हैं ताकि संवेदनषील तटीय पारिस्थिकियों का संरक्षण किया जा सके और उनके दोहन को निवारित किया जा सके। इस

प्रावधान, साथ–ही–साथ तटीय जनसंख्या तथा उनकी आजीविका संबंधी चिंताओं का निवारण भी करता है। इस संबंध में कुछ विषिश्ट उपाय किए गए हैं जिनमें तटीय वनों और कच्छ–वनस्पति के रोपण के साथ–साथ तटीय संरक्षण अवसंरचना और चक्रवात आश्रयों का निमार्ण षामिल है।

जोखिम वित्त–पोशकः दो जोखिम वित्त–पोशण कार्यक्रम जलवायु प्रभावों के अनुकूलन को समर्थित करते हैं। फसल बीमा योजना जलवायु जोखिमों के लिए किसानों को बीमा की सहायता प्रदान करती है तथा ऋण सहायता तंत्र विषेश रूप जलवायु अस्थिरता के कारण फसल खराब होने के मामले में किसानों को ऋण की सुविधा प्रदान करता है।

आपदा प्रबंधनः राश्ट्रीय आपदा प्रबंधन कार्यक्रम मौसम–संबंधी आपदाओं के पीड़ितों को सहायतानुदान उपलब्ध कराता है तथा आपदा सहायता प्रचालनों का संचालन करता है। यह आपदा प्रबंधन कार्मिकों को सूचना और प्रषिक्षण के प्रचार–प्रसार के साथ–साथ अतिसक्रिय आपदा निवारण काय्रक्रमों को भी सहायता प्रदान करता है।

भारत की नीतिगत संरचना जीएचजी न्यूनीकरण से प्रासंगिक है

भारत में एक विस्तृत नीतिगत, विनियामक और विधायी संरचना स्थापित की गई है जो विषेश रूप से जीएचजी न्यूनीकरण से संबंधित है। इसके कुछ महत्वपूर्ण प्रावधान इस प्रकार हैः

- सभी क्षेत्रों में ऊर्जा दक्षता का संवर्धन
- जन परिवहन पर बल
- जैव–ईधनों के रोपण सहित नवीकरण पर बल
- स्वच्छ ऊर्जा के लिए आण्विक और जल–विद्युत का संवर्धित विकास
- अनेक स्वच्छ ऊर्जा संबंधी प्रौद्योगिकियों पर संकेन्द्रित अनुसंधान और विकास

अभी तक हासिल किए गए अनुभव ने भारत को जलवायु परिवर्तन संबंधी राश्ट्रीय कार्ययोजना (एनएपीसीसी) के माध्यम

से एक अधिक अतिसक्रिय दृश्टिकोण अपनाने में समर्थ बनाया है। एनएपीसीसी उन उपायों की पहचान करती है जो

हमारे विकास संबंधी उद्देष्यों को प्रवर्तित करते हैं तथा साथ–ही–साथ जलवायु परिवर्तन का प्रभावी रूप से निवारण

करने के लिए सह–लाभों को भी प्रदान करते हैं। यह विकास और जलवायु परिवर्तन से संबंधित अनुकूलन और

न्यूनीकरण के भारत के उद्देष्यों को भी साथ–साथ आगे बढ़ाने के लिए अनेक कदम उठाता है। निम्नलिखित आठ

राश्ट्रीय मिषन राश्ट्रीय कार्यनीति के केंद्र का निर्माण करते हैं तथा ये जलवायु परिवर्तन के संदर्भ में मुख्य लक्ष्यों को

प्राप्त करने के लिए बहुआयामी, दीर्घकालिक और एकीकृत कार्यनीतियों का प्रतिनिधित्व करते हैः

;पद्धराश्ट्रीय सौर मिषन

;पपद्ध राश्ट्रीय संवर्धित ऊर्जा दक्षता मिषन

;पपपद्ध राश्ट्रीय संपोशणीय वास मिषन

;पअद्ध राश्ट्रीय जल मिषन

;अद्ध राश्ट्रीय हिमालयी पारिस्थिकी संपोशण मिषन

;अपद्ध राश्ट्रीय श्हरित भारतश मिषन

;अपपद्ध राश्ट्रीय संपोशणीय कृशि मिषन

;अपपपद्ध राश्ट्रीय जलवायु परिवर्तन रणनीतिक ज्ञान मिषन

किसानों के लिए कार्रवाई विकल्प

- जलवायु परिवर्तन पर जागरूकताः किसानों को जलवायु अस्थिरता, जलवायु परिवर्तन, फसल उत्पादन पर इसके प्रभाव तथा फसल विकल्पों के बारे में संवेदनषील बनाए जाने की आवष्यकता है।

- **कृशि–मौसम परामर्षः** कृशक समुदाय को कृशि–मौसम परामर्ष उपलब्ध कराए जाते हैं। विद्यमान मौसम, मृदा और फसल परिस्थिति और मौसम के पूर्वानुमान को ध्यान में रखते हुए इसके बुलेटिनों को तैयार किया जाता है। नुकसानों को कम करने तथा इनपुटों का इश्टतमीकरण करने (भूमि की तैयारी, फसल और कृशि–जोपजाति का चयन, बुआई की तारीख, कटाई की तारीख, सिंचाई कार्यक्रम, कीटनाषक और उर्वरक अनुप्रयोग, अति–उग्र मौसम परिस्थितियां, आदि) के लिए मौसम के पूर्वानुमान को ध्यान में रखते हुए उपाय/प्रक्रियाएं/सुझाव दिए जाते हैं। कृशि–परामर्ष बुलेटिन में तीन भाग होते है ;पद्ध पिछले सप्ताह घटित हुई मौसम–संबंधी घटनाएं तथा अगले पांच दिनों के लिए मौसम का पूर्वानुमान। इन पूर्वानुमानों में मौसम मानदण्ड षामिल हैं, जैसे बादलों की मात्रा, वर्शा, हवा की औसत गति, हवा की दिषा, आरएच अधिकतम और न्यूनतम तापमान। ;पपद्ध इसमें कृशि के विकास, चलने वाले कृशीय प्रचालनों, रोगों और कीटों के उत्पन्न होने की स्थिति और अवस्था पर वास्तविक जानकारी षामिल होनी है। ;पपपद्ध यह मौसम के आधार पर आरंभ किए गए विभिन्न कृशि क्रियाकलापों पर मूल्यवर्धित जानकारी भी प्रदान करता है।

  कुल मिलाकर 23 राज्य कृशि–मौसम सेवा केंद्र खोले गए हैं। ये मंगलवार और षुक्रवार को राज्य कृशि विभाग के सहयोग से कृशि–मौसम परामर्ष तैयार करते हैं। कृशि–मौसम परामर्ष आकाषवाणी (एआईआर), प्रिंट मीडिया, दूरदर्षन, वेबसाइट और एसएमएस के माध्यम से दिया जाता है।

- **मौसम सूचकांक पर आधारित बीमा उत्पादः** मौसम बीमा का मुख्य उद्देष्य प्रतिकूल मौसम परिस्थितियों के कारण फसल की पैदावार में आए अंतर के प्रतिषत का अनुमान लगाना है। मौसम बीमा अतिरिक्त व्यय अथवा किसी विषिश्ट खराब मौसम की घटना के कारण लाभ की हुई हानि के प्रति संरक्षण प्रदान करता है।

- **आकस्मिकता की योजनाः** यह किसी ऐसे अपवादस्वरूप जोखिम के लिए तैयार की गई योजना है जिसे टालना व्यावहारिक नहीं है अथवा असंभव है। कृशि मंत्रालय, भारतीय कृशि अनुसंधान परिशद (आईसीएआर) और राज्य कृशि विष्वविद्यालयों (एसएयू) के सहयोग से कृशि और संबद्ध क्षेत्रों के लिए जिला–केंद्रित आकस्मकिता योजना पर कार्य कर रहा है। इसमें मात्स्यिकी भी षामिल है तथा यह योजना राश्ट्रीय कृशि विकास योजना (आरकेवीवाई) के अंतर्गत मार्च 2010 में आरंभ की गई थी। कुल 600 में से लगभग 300 जिलों के लिए आकस्मिकता योजनाएं तैयार की गई तथा उन्हें विषेशज्ञों द्वारा वैधता प्रदान की गई और उन्हें कृशि और सहकारिता विभाग (डीएसी), आईसीएआर, षुश्क भूमि क्षेत्र अनुसंधान केंद्र (सीआरआईडीए) की वेबसाइटों पर प्रदर्षित किया गया। व्यापक जिला–विषिश्ट दस्तावेज में उन कृशि और पैदावार प्रक्रियाओं पर विवरण षामिल होते हैं जिन्हें मानसून की कम वर्शा अथवा उसमें विलंब, बेमौसम की वर्शा अथवा असामान्य रूप से उच्च तापमान, अत्यधिक वर्शा आदि के मामलों में अपनाया जाता है। किसी अपरिहार्य घटना के मामले में प्रत्येक जिले के पास अपनाए जाने के लिए एक वैज्ञानिक दस्तावेज होता है।

- **कृशकों को जलवायु समुत्थानषील प्रौद्योगियों का किसानों को प्रदर्षन विस्तार कार्मिकों द्वारा निम्नलिखित क्षेत्रों में किया जाना चाहिए–**

  (i) **प्राकृतिक संसाधन प्रबंधनः** यथास्थाने आर्द्रता संरक्षण, वर्शा जल संचयन तथा अनुपूरक सिंचाई के लिए पुनःचक्रण, बाढ़–प्रवण क्षेत्रों में संवर्धित जल–निकासी, संरक्षित जोत, भूमिगत जल पुनः आवेषन और जल बचत सिंचाई पद्धतियों आदि पर हस्तक्षेप।

(ii) **फंसल उत्पादनः** सूखा/तापमान सह्य किस्मों को प्रयोग में लाना, सीमांत उश्णता दबाव वाले क्षेत्रों में रबी की फसलों के रोपण की तारीख को आगे बढ़ाना, जल बचत धान रोपण पद्धतियां (एसआरआई, वातायित, प्रत्यक्ष बीजण), धूमन के माध्यम से बागवानी में ओला नियंत्रण, विलंबित मानसून के लिए समुदाय नर्सरियां, समय पर रोपण के लिए फार्म मषीनों हेतु उपभोक्ता किराया–सुविधा केंद्र, उच्च संपोशणीय पैदावार सूचकांक के साथ स्थान–विषिश्ट अंतरफसल प्रणालियां, आदि।

(iii) **पषुधन और मात्स्यिकीः** सूखे/बाढ़ के दौरान चारा उत्पादन का संवर्धन, सामान्य संपत्ति संसाधन (सीपीआर) की उत्पादकता में सुधार, संवर्धित चारा/आहार भण्डारण पद्धतियों का प्रवर्तन, निवारणात्मक टीकाकरण, उश्मा/षीत दबाव कम करने के लिए संवर्धित आश्रय, जल की कमी और अधिक जल, आदि के दौरान मत्स्य तालाबों/टैंकों का प्रबंधन।

(iv) **संस्थागत हस्तक्षेपः** बीज बैंक, चारा बैंक, कस्टम हायरिंग केंद्र, सामूहिक विपणन से संबंधित संस्थागत हस्तक्षेप, चाहे वे विधमान को सुदृढ़ बनाकर अथवा नए को प्रारंभ करके किए गए हों, तथा मौसम सूचकांक आधारित बीमा की षुरूआत और एक ग्राम स्तर के मौसम केंद्र के माध्यम से मौसम संबंधी जानकारी।

- **विस्तार प्रणाली** को आजीविका विकल्पों का विविधीकरण करने, ऐसे परिवर्तन को समायोजित करने जो किसी विषेश स्थान में घटित हो रहा हो, के लिए उपयुक्त फसल पैटर्नों को बदलने, अधिक सूखा–सहिश्णु फसलें उगाने, गैर–कृशीय क्रियाकलापों तथा कृशि–वानिकी प्रक्रियाओं के संवर्धित भाग को प्रवर्तित करने, पारंपरिक फसल रणनीतियों, संवर्धित ऑन–फार्म मृदा एवं जल संरक्षण की पहचान करने, मिश्रित फसल पैटर्न को प्रवर्तित करने तथा मौसम से संबंधित विभिन्न सूचनाओं की पहुंच के लिए प्रावधान करने पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए और जलवायु

परिवर्तनों पर अन्य परामर्ष जलवायु परिवर्तन से संबधित किसानों के जोखिम और उनकी निष्चितता को न्यूनतम करेंगे।

निश्कर्शः

उपर्युक्त से यह स्पश्ट है कि जलवायु परिवर्तन के कारण समूचे विष्व में बाढ़ और सूखा आने, गर्म और ठंडी लहरें चलने की घटनाएं अत्यंत आम हो गई हैं। किसानों की आजीविका पर उनके प्रतिकूल प्रभाव अत्यधिक उग्र होते हैं। ऐसी घटनाएं हमारे देष में अधिक घटित होती हैं क्योंकि हमारी अर्थव्यवस्था कृशि पर अधिक निर्भर है। आष्चर्य की बात यह है कि विपरीत प्रकृति की मौसम संबंधी उग्र घटनाएं जैसे ठंडी और गर्म लहरें, बाढ़ और सूखा, एक ही क्षेत्र में अथवा विभिन्न क्षेत्रों में एक ही वर्श के भीतर देखी जाती हैं तथा इनकी संख्या में आने वाले वर्शों में और अधिक वृद्धि होने की संभावना है। मानव और फसलों की हानि के और भी गंभीर होने का अनुमान है। मौसम में होने वाले समग्र परिवर्तन बढ़ती हुई ग्रीनहाउस गैसों तथा मानव द्वारा उत्प्रेरित वायुविलयों के साथ सहयोजित हैं तथा उनके बीच विद्यमान असंतुलनों के कारण भारत में मानसून के वर्श–दर–वर्श व्यवहार में भी अनिष्चितता उत्पन्न होती है। अतः विकसित एवं विकासषील देषों की ओर से पर्यावरण में जाने वाली ग्रीनहाउस गैसों को कम करते हुए औद्योगिकीकरण को पर्यावरण–हितैशी बनाने के लिए दृढ़–संकल्प प्रयास किए जाने चाहिए। इसी प्रकार, जलवायु परिवर्तन तथा विभिन्न क्षेत्रों पर इसके प्रभावों अर्थात् कृशि, स्वास्थ्य, अवसंरचना, जल, वानिकी, मात्स्यिकी, भूमि और समुद्र जैव–विविधता और समुद्र–तल, तथा जलवायु परिवर्तन में मानवीय हस्तक्षेपों द्वारा निर्वाह की जा रही भूमिका पर जागरूकता कार्यक्रमों को प्राथमिकता के आधार पर क्रियान्वित किए जाने की आवष्यकता है। इस प्रक्रिया में, लोगों की जीवन–षैली में भी परिवर्तन किया जाना चाहिए ताकि वह वायुमण्डल में ग्रीनहाउस गैसों तथा सीएफसी को उत्सर्जित करके पृथ्वी के पर्यावरण के सांतत्यक को क्षतिग्रस्त न कर सकें। कृशि के दृश्टिकोण से, फसलों पर अत्यंत उग्र जलवायु संबंधी घटनाओं के प्रभावों को प्रलेखित किया जाना चाहिए ताकि योजना निर्माताओं के लिए इन घटनाओं की पुनरावृत्ति के मामले में इनके कुप्रभावों को न्यूनतम बनाने में सहायता मिल सके। इसके अलावा, जलवायु परिवर्तन के अनुमानित प्रभावों के विशय में

किसानों का मार्गदर्षन करने तथा उन्हें कृशि क्षेत्र में जोखिम को कम करने के लिए न्यूनीकरण और अनुकूलन विकल्पों के बारे में जानकारी प्रदान करने की भी आवष्यकता है।

संदर्भ

एषियाई विकास बैंक, 2009, एषिया और पौसिफिक क्षेत्र में जलवायु परिवर्तन पर संबोधित करते हुए

टिप्पणी (1) सम्प्रेशण, 2008, आपदाप न्यूनीकरण हेतु अंतर्राश्ट्रीय कार्य–नीति, जिनेवा, सितम्बर, 2008 अंतर्राश्ट्रीय खाद्य नीति अनुसंधान संस्थान,2009। जलवायु परिवर्तनः कृशि और अंगीकरण की लागत पर प्रभाव, 2009 जमील अहमद, दस्तगीर आलम और सुश्री षौकत हसीन. 2011.

भारत में कृशि और खाद्य सुरक्षा पर जलवायु का प्रभाव इंट. जू. ऑफ एग्रील., एनवी और बॉयीटेक, खंड 4, संख्याः 2 जून, 2011 129–137.

सिंह एच.एस. भारत में मानग्रोवस पर जलवायु परिवर्तन का सक्षम प्रभाव (0894–बी2)

जलवायु परिवर्तन पर राश्ट्रीय कार्रवाई योजना पर दस्तावेज, भारत

आईपीसीसी(जलवायु परिवर्तन पर अंतः सरकारी पैनेल) 2007. जलवायु परिवर्तनः भौतिक विज्ञान आधार. आई वी मूल्यांकन रिपोर्ट, पर्यावरण सर्वेक्षण 2007, द हिंदु, पृश्ठ 147–155.

प्रसाद, आर और राणा, आर. 2006. मार्च 2004 में अधिकतम तापमान पर एक अध्ययन और हिमाचल प्रदेष में रबि फसलों पर इसका प्रभाव. कृशि वायुमंडलीय जर्नल, 8(1): 91–99

प्रसाद राव, जी.एस.एल.एच.वी. और एलेक्जेंडर, डी. 2007. ट्रोपीकल देषों में कृशि क्षेत्र पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव. कॉलेज ऑफ फिषरिज, पाननगाद, कोची में 14 दिसंबर, 2007 को आयोजित डब्ल्यूटीओ कार्यषाला की कार्यवाहियां, केरल कृशि विष्वविद्यालय, 80 पृश्ठ

प्रसाद राव, जी.एस.एल.एच.वी और एलेक्जेंडर, डी, 2008. ट्रोपीकल देषों में कृशि क्षेत्र पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव–, सिफारिषें, कॉलेज ऑफ फिषरीज, पाननगाद, कोची में 14 दिसंबर, 2008 को आयोजित डब्ल्यूटीओ की कार्यवाहियां, पृश्ठ 26

रामकृश्ण, वाई.एस.,राव, जी.जी.एस.एन., राव, एस.जी. और विनयकुमार, पी. 2006. कृशि में जलवायु परिवर्तन का प्रभाव, आईएनः पर्यावरण और कृशि (इडीएस. चड्डा, के.एल. और स्वामीनाथन, एस.एस.) मल्होत्रा पब्लिषिंग हाउस, नई दिल्ली, पृश्ठ. 1–30.

समरा, जे.एस., सिंह, जी और रामकृश्णा, वाई.एस. 2004. उत्तर भारत में 2002–2003 में षीत लहर और फसलों पर इसका प्रभाव. द हिंदु, दिनांक 10 जनवरी, 2004. पृश्ठ 6.

षुक्ला, पी.आर., षर्मा, एस.के. और रमन्ना, वी.पी. 2002. जलवायु परिवर्तन और भारत–मुद्दे, चिंताएं और अवसर, टाटा–मैकग्रा–हिल पब्लिषिंग कंपनी लिमिटेड, नई दिल्ली, पृश्ठ 314.

प्रसाद राव, जी.एस.एल.एच.वी. भारतीय खाद्य अनाज उत्पादन पर अतिषय मौसम का प्रभाव

मिश्रा, एच.पी. जलवायु परिवर्तन परिप्रेक्ष्य में फसल कीट परिदृष्य में परिवर्तन, प्रोफेसर, एंटोमोलोजी विभाग, कृशि महाविद्यालय, ओ.यू.ए.टी., भुवनेष्वर

ूण्बतपकंण्पद

संलग्नक

कृशि आकस्मिकता योजनाः

1ण0 मौसम संबंधी आकस्मिकताओं के लिए कार्य–नीति

1ण1 सूखा

1ण1ण1 वर्शा सिंचित स्थिति

			सुझावित आकस्मिक उपाय		
मौसम पूर्व सूखा (विलंबित धावा)	प्रमुख खेती स्थिति	फसल/फसल पद्धति	फसल/फसल पद्धति में परिवर्तन	कृशि विज्ञान उपाय	कार्यान्वयन पर टिप्पणियां
2 सप्ताह की देरी (माहनिर्दिश्ट करें)'					
4 सप्ताह की देरी					
6 सप्ताह की देरी					
8 सप्ताह की देरी					

स्थिति			सुझावित आकस्मिक उपाय		
मौसम पूर्व सूखा (सामान्य धावा)	**प्रमुख खेती स्थिति**	**सामान्य फसल/फसल प्रणाली**	**फसल प्रबंधन**	**मृदा पोशण व आद्रता संरक्षण उपाय**	**कार्यान्वयन पर टिप्पणियां**
सामान्य धावे सहित बुवाई के 15–20 दिन बाद सूखा, स्थिति जिससे अंकुरण/ फसल स्टैंड आदि होता है					
मौसम मध्य सूखा (लंबी अवधि सूखा, 2 सप्ताह तक वर्शा रहित (झ2.5 मि.मी.अवधि)					
मौसम मध्य सूखा (लंबी अवधि सूखा) पुश्प/फल अवस्था					
टर्मिनल सूखा (मानसून का पहले ही चला जाना)					

1ण1ण2 सूखा–सिंचाई स्थिति

स्थिति			सुझावित आकस्मिक उपाय		
	प्रमुख खेती स्थिति	सामान्य फसल/ फसल पद्धति	फसल/ फसल पद्धति में परिवर्तन	कृषि–विज्ञान उपाय	कार्यान्वयन पर टिप्पणियां
निम्न वर्शा के कारण नहरों में जल विलंब से छोड़ना					
निम्न वर्शा के कारण नहरों में जल सीमित मात्रा में छोड़ना					
जलग्रहण में मानसून के विलंबित धावे के अन्तर्गत नहरों में जल न छोड़ना					
निम्न वर्शा के कारण भूमिगत जल का अपर्याप्त पुनर्भरण					

1ण्2 असामान्य वर्शा (बे–समय, बे–मौसम आदि) (वर्शा सिंचित और सिंचित दोनों, स्थितियां)

छोटी अवधि में निरंतर उच्च वर्शा के कारण जल–ग्रसन	सुझावित आकस्मिक उपाय			
	उगाव अवस्था	पुश्पण अवस्था	फसल परिपक्वता अवस्था	कटाई पष्चात
फसल 1 (धान) (फसल विषिश्ट)				
बागवानी				
फसल 1 (आम) (फसल विषिश्ट)				
छोटी अवधि ^{2} में प्रचंड पवन सहित भारी वर्शा				
फसल 1 (धान) (फसल विषिश्ट)				
बागवानी				
फसल 1(आम) (फसल विषिश्ट)				
बे–मौसम वर्शा के कारण कीटों और रोगों का प्रकोप				
फसल 1				
बागवानी				
फसल 1(आम)				

1ण्3 **बाढ़**

स्थिति	सुझावित आकस्मिक उपाय			
अस्थायी जल–ग्रसन/ आंषिक जलप्लावन	अंकुरण/नर्सरी अवस्था	उगाव अवस्था	पुनर्उत्पादकता अवस्था	कटाई पर
फसल 1(धान)				
बागवानी				
फसल 1(आम)				
2 दिन से अधिक निरंतर जलमग्नावस्था				
फसल 1(धान)				
बागवानी				
फसल 1(आम)				
समुद्र जल दखल				
फसल 1				

1ण्4 अतिषय घटनाएंः गर्म हवाएं/षीत हवाएं/पाला/ओला–वृश्टि/चक्रवात

अतिषय घटना का प्रकार	सुझावित आकस्मिक उपाय			
	अंकुरण/नर्सरी अवस्था	उगाव अवस्था	पुनर्उत्पादकता अवस्था	कटाई पर
गर्म हवाएं				
फसल 1(धान)				
बागवानी				
फसल 1(आम)				
षीत हवाएं				
फसल 1(धान)				
बागवानी				

फसल 1(आम)				
पाला				
फसल 1(धान)				
बागवानी				
फसल 1(आम)				
ओला–वृश्टि				
फसल 1(धान)				
फसल 1(आम)				
चक्रवात				
फसल 1(धान)				
बागवानी				
फसल 1(आम)				